॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

देवी उपनिषद

विषय सूची

॥अथ देव्युपनिषत् ॥ 3
देवी उपनिषद 5
शान्तिपाठ 15

॥ श्री हरि ॥

॥अथ देव्युपनिषत् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

श्रीदेव्युपनिषद्विद्यावेद्यापारसुखाकृति ।
त्रैपदं ब्रह्मचैतन्यं रामचन्द्रपदं भजे ॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

गुरुके यहाँ अध्ययन करने वाले शिष्य अपने गुरु, सहपाठी तथा मानवमात्र का कल्याण-चिन्तन करते हुए देवताओं से प्रार्थना करते है कि:

हे देवगण ! हम भगवान का आराधन करते हुए कानों से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृढः अंगों एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हमलोग; जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके, उसका उपभोग करें।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

जिनका सुयश सभी ओर फैला हुआ है, वह इन्द्रदेव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, हमारे जीवन से अरिष्टों को मिटाने के लिए चक्र सदृश्य, शक्तिशाली गरुड़देव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

हमारे, अधिभौतिक, अधिदैविक तथा तथा आध्यात्मिक तापों (दुखों) की शांति हो।

॥ हरिः ॐ ॥

॥ श्री हरि ॥

॥ देव्युपनिषत् ॥

देवी उपनिषद

॥ अथर्ववेदीय शाक्तोपनिषत् ॥

॥ अथर्ववेदीय शाक्त उपनिषद ॥

हरिः ॐ ॥ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः । कासि त्वं महादेवि ।
साब्रवीदहं ब्रह्मस्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं
जगच्छून्यं चाशून्यं च । अहमानन्दानानन्दाः विज्ञानाविज्ञाने अहम् ।
ब्रह्मा ब्रह्मणि वेदितव्ये । इत्याहाथर्वणि श्रुतिः ॥ १॥

समस्त देवगण देवी के समक्ष उपस्थित होकर प्रार्थना करते हुए बोले- 'हे महादेवि ! आप कौन हैं? कृपा करके बताने का अनुग्रह करें।' तदनन्तर उन (देवी) ने उत्तर दिया- 'हे देवों ! मैं ब्रह्म स्वरूपा हूँ। मेरे द्वारा ही यह प्रकृति-पुरुषात्मक विश्व प्रादुर्भूत हुआ है। (अज्ञानियों के लिए) यह मुझसे शून्य (रहित) तथा (ज्ञानियों के लिए) अशून्य (सहित) है। मैं ही आनन्दस्वरूपा एवं आनन्दरहिता हूँ। मैं विज्ञानमयी एवं विज्ञानविहीना हूँ। निश्चय ही मैं जानने योग्य ब्रह्म एवं ब्रह्म से भी परे हूँ। ऐसा ही अथर्ववेद का यह मंत्र है'॥१॥

अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि । अहमखिलं जगत् ।
वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् ।
अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् । अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत
विश्वदेवैः । अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ ।
अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधाम्यहम् । विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुत
प्रजापतिं दधामि । अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये ३
यजमानाय सुन्वते अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनामहं सुवे पितरमस्य
॥२॥

मैं ही पञ्चीकृत (पाँच तत्त्वों का सम्मिलित रूप) और अपञ्चीकृत (पाँच तत्त्वों का स्वतंत्र रूप) महाभूत भी हूँ। दृष्टिगोचर होने वाला सम्पूर्ण विश्व भी मैं ही हूँ। वेद (ज्ञान) एवं अवेद (अज्ञान) भी मैं हूँ। विद्या और अविद्या भी मैं ही हूँ। अजा (प्रकृति) और अनजा (प्रकृति से भिन्न) भी मैं ही हूँ। ऊर्ध्व एवं अधः और अगल-बगल भी मैं ही हूँ। मैं रुद्रों एवं वसुओं के रूप में सर्वत्र सञ्चरणशील हूँ। मैं आदित्यों एवं विश्वेदेवों के रूप में सर्वत्र विचरण किया करती हूँ। मैं ही मित्र तथा वरुण का, इन्द्र एवं अग्नि का तथा दोनों अश्विनीकुमारों का सदैव पालन-पोषण किया करती हूँ। मैं ही सोम, पूषा, त्वष्टा एवं भग को भी धारण करती हूँ। मैं ही त्रिलोकी को आक्रान्त करने के लक्ष्य-प्राप्ति हेतु विस्तीर्ण पादक्षेप करने वाले भगवान् विष्णु, ब्रह्मदेव एवं प्रजापति को भी धारण करती हूँ। मैं ही देवताओं को हवि पहुँचाने तथा सावधानी पूर्वक सोमाभिषव करने वाले यजमान के निमित्त हविर्द्रव्यों से सम्पन्न धन को धारण करती हूँ। मैं ही सम्पूर्ण विश्व की अधीश्वरी, उपासकों के लिए धन-प्रदान करने वाली, ज्ञानवती और यजन करने योग्य देवों में

प्रमुख हूँ। मैं ही इस विश्व के पितास्वरूप सर्वाधिष्ठानरूप परमात्मा को प्रकट करती हूँ॥२॥

मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे । य एवं वेद स देवीपदमाप्नोति । ते देवा अब्रुवन् । नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ ३॥

सभी प्राणियों के हृदय कमल (अन्त: समुद्र) और अप्तत्त्व (सृष्टि के मूल घटक पंचभूतादि) में मेरा निवास स्थान निहित है। जो मनुष्य ऐसा जानता है, वह देवी पद (देवी की विभूतियों) को प्राप्त करता है। इसके पश्चात् देवों ने पुनः निवेदन किया-हे महादेवि ! आपको नमस्कार है। महान् प्रख्यात पुरुषों को भी स्वकर्तव्य पथ पर आरूढ़ करने वाली कल्याणमयी महादेवी को सादर नमन-वन्दन है। प्रकृति-स्वरूपा एवं भद्रा अर्थात् कल्याणमयी देवी को प्रणाम है। हम उन महान् देवी को नियमपूर्वक प्रणाम करते हैं॥३॥

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् । दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये सुतरां नाशयते तमः ॥ ४॥

उन अग्नि के सदृश वर्ण वाली, तप से प्रकाशित, दीप्तिमती एवं कर्मफल के प्राप्ति हेतु हम माँ भगवती दुर्गा देवी की शरण प्राप्त करते हैं। (हे देवि !) आप मेरे अज्ञानान्धकार को पूर्णतया नष्ट करें।

देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति। सा नो मन्द्रेशमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुपसुष्टुतैतु ॥ ५॥

प्राण रूपी देवताओं ने जिस प्रकाशमती 'वैखरी' वाणी को प्रकट किया, उस विविध रूपों वाली 'वैखरी' वाणी को सभी प्राणी बोलते हैं। कामधेनु के समान आनन्दमयी एवं अन्न और बल प्रदान करने वाली वाणी स्वरूपिणी माँ भगवती श्रेष्ठ एवं महान् स्तुतियों से प्रसन्न होकर हमारे समक्ष पधारें॥५॥

कालरात्रिं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम् ।
सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् ॥ ६॥

कालरात्रि (सदृश), वेदों द्वारा स्तुत, वैष्णवी शक्ति, स्कन्दमाता, सरस्वती, देवों की माता अदिति और दक्ष कन्या आदि रूपों में पापों को विनष्ट करने वाली एवं कल्याणमयी भगवती को हम नमस्कार करते हैं। ॥६॥

महालक्ष्मीश्च विद्महे सर्वसिद्धिश्च धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ ७॥

हम माता महालक्ष्मी को जानते हुए सतत उन सर्वसिद्धिदात्री देवी को हृदय में धारण करते हैं, वे देवी हमें (सज्ञान एवं सच्चिन्तन की ओर) प्रेरित करें॥७॥

अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव । तां देवा
अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ॥ ८॥
कामो योनिः कामकला वज्रपाणिर्गुहा हसा ।
मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः पुनर्गुहा सकला मायया च
पुनः कोशा विश्वमाता दिवि द्योम् ॥ ९॥

हे दक्ष ! जो आपकी कन्या अदिति हैं, वे प्रसूता होने के पश्चात् स्तुत्य हैं एवं उन्होंने कल्याणकारी अमृतत्व गुणों से युक्त देवों को प्रादुर्भूत किया है। (आदिमूल विद्या इस प्रकार है-) यह काम, योनि, वज्रपाणि, कामकलागुहा, वर्ण (ह और स), वायु, अभ्र, इन्द्र, पुनः गुहा, वर्ण (स, क, ल) और माया आदि से विशिष्ट-रूपा (बहुसुखदात्री या सर्वत्र गमनशीला या ऐश्वर्यरूपा) ब्रह्मस्वरूपिणी एवं 'आदि' मूल विद्या (प्रवर्धमान हुई) है॥८-९॥

एषात्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेद स शोकं तरति । नमस्ते अस्तु भगवति भवति मातरस्मान्पातु सर्वतः । सैषाष्टौ वसवः । सैषैकादश रुद्राः। सैषा द्वादशादित्याः । सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च । सैषा यातुधानु असुरा रक्षांसि पिशाचयक्षाः सिद्धाः । सैषा सत्त्वरजस्तमांसि । सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः । सैषा ग्रहा नक्षत्रज्योतींषि कलाकाष्ठादिकालरूपिणी । तामहं प्रणौमि नित्यम् । तापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम् । अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ॥ १०॥

ये जगन्माता विश्व को सम्मोहित करने वाली परमात्मशक्ति हैं। ये पाश, अंकुश, बाण एवं धनुष को धारण करती हैं तथा यही श्रीमहाविद्या के नाम से जानी जाती हैं। जो मनुष्य इस प्रकार से इन्हें जानता है, वह शोक से मुक्त हो जाता है। हे भगवती ! आपको प्रणाम है। हे माता ! आप हमारी पूरी तरह से रक्षा करें। वही जगदम्बा आठ

वसुओं के रूप में हैं, एकादश रुद्र एवं द्वादश आदित्य भी वही हैं। सोम को ग्रहण करने वाले और ग्रहण न करने वाले जितने भी विश्वेदेव हैं, वे सभी जगन्माता के रूप में स्थित हैं। वे ही (जगन्माता) यातुधान (एक तरह के असुर), राक्षस, असुर, पिशाच, यक्ष एवं सिद्ध आदि भी हैं। वे ही ये सत, रज, तम आदि तीनों गुण हैं। वे ही ये ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्रस्वरूपा हैं। वे ही ये प्रजापति, इन्द्र और मनु भी हैं। वे ही ग्रह, नक्षत्र एवं समस्त तारागण हैं तथा वे ही कला-काष्ठादि से युक्त कालस्वरूपिणी हैं। ताप (मनस्ताप) का शमन करने वाली, भोग एवं मोक्ष को प्रदान करने वाली, अनन्त गुणों वाली विजय की अधिष्ठात्री, दोष-विहीन, शरण प्राप्ति के योग्य, कल्याणदायिनी एवं मंगलमयी उन भगवती देवी को हम सर्वदा नमस्कार करते हैं॥१०

वियदाकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् ।
अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ॥ ११॥
एवमेकाक्षरं मन्त्रं यतयः शुद्धचेतसः ।
ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ॥ १२॥

वियत् अर्थात् आकाश एवं 'ई' कार से संयुक्त, वीतिहोत्र अर्थात् अग्नि के सहित, अर्द्धचन्द्र (*) से सुशोभित जो देवी का बीज (मन्त्र हीं) शब्द है, वह समस्त इच्छा-आकांक्षाओं को पूर्ण करने में सक्षम है। इस एकाक्षर स्वरूप ब्रह्म का (संयमशील) साधुजन, जो शुद्धचित्त वाले हैं, परमानन्द से युक्त हैं तथा अगाध ज्ञान के सागर हैं, निरन्तर ध्यान करते हैं॥११-१२॥

वाङ्म्या ब्रह्मभूतस्मात्षष्ठं वक्त्रसमन्वितम् ।
सूर्यो वामश्रोत्रबिन्दुः संयुताष्टकतृतीयकः ॥ १३॥
नारायणेन संयुक्तो वायुश्चाधरसंयुतः ।
विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः ॥ १४॥

वाशक्ति (ऐँ), माया (ह्रीं), ब्रह्मभू-काम (क्लीं), वक्त्र अर्थात् आकार युक्त छठा व्यञ्जन (चा), सूर्य (म), अवामश्रोत्र-दक्षिण कर्ण (उ) एवं बिन्दु अर्थात् अनुस्वार सहित (मुं), नारायण अर्थात् 'आ' से युक्त'ट' कार से तृतीय वर्ण (डा), वायु (य) वही अधर अर्थात् 'ऐ' से युक्त (यै) और 'विच्चे'- यह नवार्ण मन्त्र साधकों को आनन्द एवं ब्रह्मसायुज्य पद प्रदान करने वाला है॥१३-१४॥

हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम् ।
पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम् ।
त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे ॥ १५॥
नमामि त्वामहं देवीं महाभयविनाशिनीम् ।
महादुर्गप्रशमनीं महाकारुण्यरूपिणीम् ॥ १६॥

जो (देवी) हृदय-कमल के मध्य में विराजमान रहती हैं, जो प्रात:काल के सूर्य की भाँति प्रभावाली, पाश एवं अंकुश धारण करने वाली, सौम्यरूपा, वर एवं अभय मुद्राओं से युक्त हाथ वाली, तीन नेत्रों से युक्त, लाल परिधान वाली तथा भक्तों की मनोकामना पूर्ण करने वाली हैं। हे देवि ! आप महान् भय का विनाश करने वाली, महासंकट को शान्त करने में समर्थ एवं महान् करुणामयी हैं, मैं आपकी वन्दना करता हूँ॥१५-१६॥

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यतेऽज्ञेया ।
यस्या अन्तो न विद्यते तस्मादुच्यतेऽनन्ता ।
यस्या ग्रहणं नोपलभ्यते तस्मादुच्यतेऽलक्ष्या । यस्या
जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यतेऽजा ।
एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यत एका । एकैव विश्वरूपिणी
तस्मादुच्यते नैका ऽत एवोच्यतेऽज्ञेयानन्तालक्ष्याजैका नैकेति ।
मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी ।
ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी ॥ १७॥

जिन (देवी) के स्वरूप को ब्रह्मा आदि भी नहीं जानते, इस कारण उन्हें 'अज्ञेया' कहा गया है। जिनका अन्त नहीं होता, अतः वे अनन्ता (अन्तरहित) हैं। जिनका स्वरूप दृष्टिगोचर नहीं होता, इस कारण उन्हें अलक्ष्या कहते हैं। जिनके जन्म का अता-पता नहीं, इसलिए उन्हें 'अजा' कहा जाता है। जो एकाकी ही सर्वत्र विद्यमान रहती हैं, इस कारण उन्हें 'एका' कहते हैं। जो अकेले ही विश्वरूप में विद्यमान हैं, इसलिए उन्हें 'नैका' कहा गया है। अत: वे इन्हीं कारणों से अज्ञेया, अनन्ता, अलक्ष्या अजा, एका और नैका के नाम से जानी जाती हैं। देवी समस्त मंत्रों में 'मातृका' अर्थात् मूलाक्षर में प्रतिष्ठित हैं और शब्दों में ज्ञान रूप से स्थित हैं। ज्ञान में 'चिन्मयातीता' रूप में और शून्यों में 'शून्यसाक्षिणी' के रूप में रहती हैं। ॥१७॥

यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता ।
दुर्गात्संत्रायते यस्माद्देवी दुर्गेति कथ्यते ॥ १८॥

तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम् ।
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ॥ १९॥

जिनके अतिरिक्त और कुछ भी श्रेष्ठतम नहीं है, ऐसी वे दुर्गादेवी के नाम से प्रख्यात हैं। उन दुराचार का शमन करने वाली, दुर्विज्ञेया एवं भवसागर से पार उतारने वाली दुर्गादेवी को जगत् से भयभीत हुआ मैं प्रणाम करता हूँ। ॥१८-१९॥

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमवाप्नोति ।
इदमथर्वशीर्षं ज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति ।
शतलक्षं प्रजप्त्वापि सोऽर्चासिद्धिं च विन्दति ।
शतमष्टोत्तरं चास्याः पुरश्चर्याविधिः स्मृतः ॥ २०॥
दशवारं पठेद्यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते । महादुर्गाणि
तरति महादेव्याः प्रसादतः ॥ २१॥

इस अथर्वशीर्ष के मन्त्रों का जो मनुष्य पाठ करता है, वह पाँचों अथर्वशीर्षों के जप करने का फलप्राप्त कर लेता है। इस अथर्वशीर्ष को न जानकर जो मनुष्य अर्चा (प्रतिमा को) स्थापित करता है, वह सैकड़ोंलाखों जप करके भी सिद्धि प्राप्त नहीं कर पाता है। (वैसे) १०८ बार जप करना ही इस पुरश्चरण की विधि कही गई है। जो पुरुष इस उपनिषद् का दस बार भी पाठ कर लेता है, वह उसी क्षण अपने दुष्कृतों (पापों) से मुक्त होकर महादेवी की कृपा से महान् से महान् दुष्कर कठिनाइयों-मुसीबतों से पार हो जाता है॥२० -२१॥

प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति ।
सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति ।
तत्सायं प्रातः प्रयुञ्जानः पापोऽपापो भवति । निशीथे
तुरीयसन्ध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति ।

नूतनप्रतिमायां जप्त्वा देवतासांनिध्यं भवति ।
प्राणप्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति ।
भौमाश्विन्यां महादेवी संनिधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति
। य एवं वेदेत्युपनिषत् ॥ २२॥

इस (उपनिषद्) का प्रात:कालीन वेला में पाठ करने से रात्रि में किये हुए पापों का और सायंकाल में पाठ करने से दिन में किये गये दुष्कृत्यों का शमन हो जाता है। दोनों संध्याओं में अध्ययन करने से पाप करने वाला भी पापरहित हो जाता है। मध्यकालीन रात्रि में तुरीय संध्या के समय में जप करने से वाणी की सिद्धि मिल जाती है। नवीन प्रतिमा के समक्ष जप करने से देवता का सान्निध्य प्राप्त होता है। अमृतसिद्धि योग (मंगलवार को अश्विनी नक्षत्र) में महादेवी के समीप में जप करने से मनुष्य महामृत्यु से पार हो जाता है। जो इस तरह से इस उपनिषद् को जानता है (वह महामृत्यु से पार हो जाता है), ऐसी ही यह देव्युपनिषद् है॥२२॥

॥हरिः ॐ ॥

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

गुरुके यहाँ अध्ययन करने वाले शिष्य अपने गुरु, सहपाठी तथा मानवमात्र का कल्याण-चिन्तन करते हुए देवताओं से प्रार्थना करते है कि:

हे देवगण ! हम भगवान का आराधन करते हुए कानों से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृढः अंगों एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हमलोग; जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके, उसका उपभोग करें।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

जिनका सुयश सभी ओर फैला हुआ है, वह इन्द्रदेव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, हमारे जीवन से अरिष्टों को मिटाने के लिए चक्र सदृश्य, शक्तिशाली गरुड़देव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

हमारे, अधिभौतिक, अधिदैविक तथा तथा आध्यात्मिक तापों (दुखों) की शांति हो।

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

॥ इति श्रीदेव्युपनिषत्समाप्ता ॥

॥ देवी उपनिषद समात ॥

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ॥